IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184
INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

हिमाचल प्रदेश से आजाद हिन्द फौज के विस्मृत नायक मेजर दुर्गामल के जीवन काऐतिहासिक अध्ययन

केहर सिंह, पीएच॰डी शोधार्थी
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, देहरा, इतिहास विभाग

शोध पर्यवेक्षक
प्रोफेसर कंवर चन्द्रदीप सिंह
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, देहरा, इतिहास विभाग

सारांश

पश्चिम हिमालय में स्थित हिमाचल प्रदेश एक छोटा सा पर्वतीय प्रदेश है, यहाँ के निवासियों ने सदा ही बाहरी शक्तियों का देशहित में विरोध किया है। सनं 1857 ई॰ की क्रांति से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक देश के छोटे गावं से लेकर बड़े शहरों और व्यापक राष्ट्रीय स्तर पर अनेक ऐसी घटनाएँ उस समय की गवाह रही है। ब्रिटिश सामाज्यवादियों के खिलाफ भारतीय जनमानस ने मिलजुल कर कई यातनाओं को झेलते हुए सतत संघर्ष किया। जिसमें समाज के प्रत्येक वर्ग ने भारत की सामूहिक एकता को प्रदर्शित किया, जो प्राचीन काल से भारतीय संस्कृति की प्रुमख विशेषता रही है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आजाद हिंद फौज का अतुल्य योगदान रहा है, जिसमें हिमाचल प्रदेश के असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों ने भाग लिया और देश की आजादी में अपने प्राणों की कुर्बानियां दी। हिमाचल के पहाड़ी वीरों ने स्वतंत्रता की इस सशस्त्र लड़ाई में हल्के शास्त्रों, काम चलाऊ प्रशिक्षण और कठिन परिस्थितियों के होते हुए भी अदम्य साहस, अद्भुत शौर्य और युद्ध कौशल का परिचय दिया। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य धर्मशाला के वीर सपूत आजाद हिंद फौज के स्वतंत्रता सेनानी मेजर दुर्गामल का भारत की स्वतंत्रता में भूमिका पर प्रकाश डालना है। मेजर दुर्गामल उन सेनानियों में से एक थे, जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीय सेना के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। उन्होंने मात्र 31 वर्ष की छोटी उम्र में भारत देश की स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर दिया था।

संकेत शब्द: आजाद हिंद फौज, स्वतन्त्रता, पर्वतीय क्षेत्र, धर्मशाला, साम्राज्यवाद

भूमिका

भारत में स्वाधीनता संग्राम का इतिहास बहुत प्राचीन है। इस भूमि पर शताब्दियों से विदेशी ताकतों ने समय- समय पर आक्रमण किए हैं, और कई वर्षो तक इस देश पर विदेशी शक्तियों का शासन रहा। परन्तु इस शोध पत्र में आजाद हिन्द फौज के द्वारा देश की स्वंत्रता के लिए किए जाने वाले संघर्ष का अध्ययन शामिल है, जब सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में अंग्रेज़ों को भारत से बाहर निकाल फैंकने के लिए संघर्ष किया था। 1857 के राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के समय से ही भारत में ब्रिटिश सरकार की नीतिओं के खिलाफ जनआक्रोश बढ़ता जा रहा था। कम्पनी सरकार द्वारा छल-कपट से राज्य विस्तार, भारत की शोचनीय आर्थिक दशा, इसाई धर्मांतरण एवं शिक्षित भारतीयों की उपेक्षा से भारतीय जनमानस अवगत था।

शताब्दियों से दासता की जंजीरों में जकड़े भारत को 19वीं शताब्दी में निश्चय ही समाजिक, धार्मिक, राजनीतिक व साहित्यिक चेतना ने जगाया। इस समय (1885-1905) तक स्वतंत्रता की कमान उदारवादी दल के पास रही, लेकिन 1905 तक कांग्रेस के अधिकांश सदस्य अनुभव करने लगे कि सरकार को अधिक प्रस्ताव सौंपने से कुछ प्राप्त नही होने वाला है। ऐसे समय में कांग्रेस के गरमदल के नेताओं ने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए क्रांतिकारी व अहिंसात्मक गतिविधियां शुरू की जिनसे प्रभावित होकर देश के कई युवा स्वाधीनता संग्राम में शामिल हुए।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षो से ही हिमाचल प्रदेश की जनता में राजनीतिक जागृति और गतिशीलता स्पष्ट दिखाई देने लग गयी थी। कांग्रेस, आर्यसमाज, ब्रम्हासमाज, प्रार्थनासभा जैसे राजनीतिक और सामाजिक संस्थाओं के कार्यकलापों का इस समस्त पहाड़ी जनता पर प्रभाव पड़ने लगा था। इसके अतिरिक्त प्रेस और समाचार पत्र, यहां की प्रजा में राष्ट्रीयता की भावना को जागृत करने और राजनीतिक चेतना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने लेगे थे।[1]

इस पर्वतीय प्रदेश के लोग स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए क्रन्तिकारी तरीकों व अहिंसात्मक साधनों को अपनाकर ब्रिटिश सरकार को बलपूर्वक भारत देश से बाहर निकालने के लिए तत्पर हो गए थे। हिमाचल प्रदेश के धर्मशाल क्षेत्र में इस क्रन्तिकारी आन्दोलन की शुरुआत 1905 में ऊना से हुई, जब सरदार अजीतसिंह (भगत सिंह के चाचा) ऊना में अपने सहपाठी बाबा लक्ष्मणदास के घर पर पधारे और उन्हें देश सेवा के लिए प्रेरित किया। जिसके बाद बाबा लक्ष्मणदास में पुलिस की सार्जेंट की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया तथा लाला लाजपतराय और हंसराज के परामर्श से सहपरिवार समाज सेवा में जुट गए। जिसके बाद इनसे प्रेरणा लेकर काँगड़ा भूम्पल के यशपाल, प्रकाशवती पाल, नादौन के पं॰ इन्द्रपाल ने अपने- अपने क्षेत्रों में क्रन्तिकारी गतिविधियों को शुरू किया।[2]

हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी इलाकों में क्रांतिकारी व अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन की शुरुआत "दूम्ह" के रूप में हुई। 'दुम्ह' का अर्थ 'असहयोग' था। यह आन्दोलन देशी राजाओं के शासन काल में बेगार, भूमिकर, तथा भ्रष्ट अधिकारियों को हटाने हेतु किया जाता था। इस प्रकार के आन्दोलन 1859-1939 ई० तक काँगड़ा के साथ-साथ हिमाचल प्रदेश कई अन्य स्थानों में भी आयोजित किए गये, जिनमें-मंडी, कुल्लू, रामपुर, सिरमौर, बुशहर आदि क्षेत्र शामिल थे। यह आन्दोलन स्थानीय लोगों को ब्रिटिश प्रशसन और राजा के खिलाफ एकजुट करने में सफल साबित हुआ, जिस करण इस पर्वतीय प्रदेश में बेगार, भूमिकर एवं भ्रष्टाचार पर रोक लगाने के ब्रिटिश सरकार को उचित प्रयास करने पड़े।

इसी समय 1939 ई॰ में राष्ट्रीय स्तर पर कांग्रेस के अधयक्ष पद से त्यागपत्र देकर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने फारवर्ड ब्लाक नामक दल की स्थापना की और 1940 ई॰ तक क्रांतिकारी आन्दोलन की बागडोर उनके हाथों में आ गयी। जब ब्रिटिश सरकार ने भारतीय रजनीतिक वर्ग को विश्वास में लिए बिना दूसरे विश्व (1939-1945) युद्ध में धकेल दिया तो नेता जी ने विरोध स्वरूप आगामी स्वाधीनता दिवस धूमधाम से मनाने की सलाह दी। जिसका अनुकरण 25 जनवरी 1940 ई० को काँगड़ा के प्रमुख क्षेत्र धर्मशाला, पालमपुर, नूरपुर, नादौन आदि स्थानों में साहसी युवा काँग्रेस कार्यकर्ताओं ने स्थान- स्थान पर छोटे- छोटे झण्डे बाँटकर स्वतंत्रता दिवस मनाया तथा तिरंगे झंडे फहराए।[3]

नेताजी की कठोर नीति से घबरा कर ब्रिटिश हुकूमत ने उन्हें 1940 ई॰ में जेल में डाल दिया। जहाँ उन्होंने भूख हड़ताल कर दी जिससे ब्रिटिश सरकार घबरा गई और उन्हें जेल से छोड़ दिया गया और कड़ी निगरानी में कोलकाता स्थित घर पर नजरबंद कर दिया, अब नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने अपनी आगामी योजनाओं को अमलीजामा पहनाने का निश्चय कर लिया था अत: 16 जनवरी, 1941 ई॰ को सुभाषचंद्र बोस गोरों की आँखों में धूल झोंक कर माध्यरात्रि को मुस्लिम फकीर के भेष में देश से बाहर जाने में सफल हुए। अपनी गुप्त यात्रा में वे बीमा एजेंट, मूक और बधिर तीर्थ यात्री के रूप में सफर करते हुए विदेश पहुँचने में सफल हुए जहाँ पर पर उन्होंने भारतीय मूल के युध्बंदी सैनिकों को मुक्त करवा कर संगठित करना शुरू किया और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। वर्ष 1942 ई० में सिंगपुर की धरती पर 'आजाद हिंद फौज' नामक सैनिक संगठन की स्थापना हुई, जिसमें इस पर्वतीय प्रदेश के लगभग 4000 सैनिक शामिल थे।[4]

इस नवगठित सैनिक संगठन में जोश तथा देश प्रेम की भावना बढ़ाने के लिए धार्मिक एव देशभक्ति के गीतों को गाया जाने लगा जिसमें आजाद हिंद फौज का कौमी गीत था:-

कदम पे कदम बढ़ाए जा, ख़ुशी के गीत गाये जा।

ये ज़िन्दगी है क़ोम की, तू क़ोम पे लुटायेगा।।

इस गीत के निर्देशक हिमाचल प्रदेश की काँगड़ा घाटी के खनियारा गावं के निवासी तथा आजाद हिंद फौज के सैनिक रामसिंह ठाकुर थे। साथ में नेताजी के प्रसिद्ध नारे 'तुम मुझे खून दो में तुझे आजादी दूंगा' तथा 'दिल्ली चलो' से प्रभावित होकर इस पर्वतीय प्रदेश के कई युवा आजाद हिंद फौज से जुड़ना शुरू हुए।

प्रारंभिक जीवन और परिवार

दुर्गामल आजाद हिंद फौज के प्रमुख सेनानियों में से एक थे, जिन्होंने अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए सहर्ष फांसी के फंदे को स्वीकार किया, इनका जन्म 1 जुलाई 1913 ई० को देहरादून राज्य के डोईवाला गावं में श्री गंगा राममल तथा पार्वती देवी के घर में हुआ। यह परिवार गोरखा समुदाय से सम्बन्ध रखता था। दुर्गामल के पूर्वज अठारहवीं शताब्दी के बाद से डोईवाला क्षेत्र में रहे थे। इनका मुख्य पेशा सैन्य बलों में सेवा, कृषि और गन्ने की फसल उगाना, गुड़ और चीनी बना कर उन उत्पादों को बाजार में बेचना था। इनके पिता सेना में गोरखा राइफल्स के जमादार (जिसे अब नायब-सूबेदार कहा जाता है) के पद पर अपनी सेवाएं दे रहे थे, और इनकी माता पार्वती देवी एक गृहिणी थीं। इस परिवार में माता-पिता के आलावा दुर्गामल के तीन भाई और तीन बहन थें, चारों भाइयों में दुर्गामल सबसे बड़े थे। बचपन से ही दुर्गामल तीक्ष्ण बुधि और शारीरिक रूप से हष्टपुष्ट थे। खेलकूद तथा पढ़ने-लिखने में इनकी अत्यधिक रूचि थी। स्कूल से आने के बाद इनका अधिकतर समय खेलकूद में ही गुजरता विशेष रूप से फुटबॉल में इनकी रूचि अधिक थी। खेलों में गहरी रुचि रखने के अलावा, साहित्यिक और सामाजिक गतिविधियाँ में निरंतर भाग लिया करते थे।[5]

इस समय भारत पर ब्रिटिश सरकार का शासन था। देश के प्रत्येक वर्ग में अंग्रेजों की नीतिओं के कारण असंतोष फैला हुआ था। उतराखंड में भी अकाल, भुखमरी, बेरोजगारी, हिंसा तथा अत्यधिक राजस्व नीतियों के करण गोर्खाली समाज की दुर्दशा खराब थी। बचपन से ही इन सब हालातों को दुर्गामल ने अपनी आँखों से देखा था और देश की पराधीनता को देखकर वह बचपन से ही सामाजिक गतिविधियों में शामिल रहने लगे थे। इन्होने ने कवि और समाजसेवी सूबेदार-मेजर बहादुर सिंह बराल और संगीतकार एवं नाटककार मित्र सेन थापा से समाज और राष्ट्र प्रेम की प्रेरणा प्राप्त की थी। साथ ही देहरादून के प्रमुख गांधीवादी स्वतंत्रता सेनानी जैसे ठाकुर चन्दन सिंह, वीर खडगबहादुर सिंह बिष्ट, और पंडित ईश्वरानंद गोरखा से बहुत प्रेरित थे। जब महात्मा गाँधी के अवाहन पर 1930 ई॰ सत्यग्रह आन्दोलन शुरू हुआ, तो दुर्गामल भी इनमें आयोजित किए जाने वाले जुलूस एवं धरनों में बढ़-चढ़ कर भाग लेने लगे। इस समय दुर्गामल की आयु बहुत काम थी वह केवल नौवीं कक्षा का छात्र था लेकिन उन्होंने अपने इलाके में सक्रिय रूप से ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों में भाग लिया। उन्हें स्वतंत्रता संग्राम से सम्बन्धित पोस्टर चिपकाने का कार्य दिया गया जिसमें वह अपने कुछ मित्रों के साथ रात के समय गोरखा बटालियन क्षेत्र में प्रवेश करके इन पोस्टरों को दीवारों पर चिपका देते थे, जिसका उदेश्य गोरखा सेनिकों को मातृभूमि की सेवा के लिए प्रेरित करना था। इस प्रकार की गतिविधियों ने दुर्गामल के हृदय में देशभक्ति की भावना को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जब ब्रिटिश अधिकारियों को इन बातों की सुचना प्राप्त हुई की कई छात्र भी अंग्रेज विरोधी गतिविधियों में शामिल हो रहे हैं तो उन्होंने छात्रों के परिवारों पर दबाव बनाना शुरू करा कि वह अपने बच्चों को इन सब प्रकार की गतिविधियों से दूर रखें। जब इस प्रकार का दबाव दुर्गामल के पिता जी पर भी बनाया गया। तो अपने बेटे के भविष्य की चिंता उन्हें सताने लगी, जिस कारण उन्होंने दुर्गामल को अपने चाचा केदारमल के साथ धर्मशाला में पढ़ने के लिए भेज दिया।[6]

परन्तु दुर्गामल के लिए धर्मशाला में रहकर पढ़ाई जारी रखना कठिन था इसलिए कुछ समय बाद 26 जनवरी 1931 ई॰ को 18 वर्ष की आयु में 2/1 गोरखा रायफल्स (धर्मशाला) छावनी में भर्ती हो गये।[7] इस समय आधुनिक स्कूलों का आभाव होने के कारण अधिकतर युवा अनपढ़ ही होते थे, लेकिन पढ़े लिखे होने के कारण दुर्गामल को रिक्रूट ट्रेनिंग के बाद सिग्नल ट्रेनिंग के लिए पुणे भेजा गया। अपनी कुशाग्र बुधि तथा अथक मेहनत के आधार पर उन्हें जल्दी -जल्दी पदोन्नति मिलती रही और कुछ समय के बाद ही उनकी सिग्नल हवलदार पर नियुक्ति हो गयी। दुर्गामल सेना में लगभग 10 वर्ष सेवारत रहने के बाद जब 1941 ई॰ को अवकाश प्राप्त कर घर पहुंचे तो परिवार के कहने पर उनकी शादी भाग्सू निवासी श्रीमती शारदा देवी से हुई।[8] अभी परिवार के साथ कुछ समय बिताया ही था की उन्हें अपनी यूनिट के साथ सिंगापूर जाने का हुकम मिला क्योंकि इस समय दूसरा विश्व युद्ध लड़ा जा रहा था और ब्रिटिश सरकार ने भारतीय सेना को भी इस युद्ध में झोक दिया था।

द्वितीय विश्व युद्ध में भागीदारी

3 सितम्बर, 1939 ई० को दूसरा विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ। भारतीय ब्रिटिश सेना ने इस युद्ध में ब्रिटिश सरकार की तरफ से भाग लिया हिमाचल प्रदेश की सभी रियासतों से बहुत सैनिक भर्ती हुए। एक सच्चे देशभक्त होने के कारण मेजर दुर्गामल कभी हताश नहीं हुए उन्होंने अपनी नवविवाहित दुल्हन को घर पर अकेला छोड़कर अत्यंत साहस के साथ युद्ध के लिए मार्च किया। दुर्गामल की यूनिट को 1941 में में सिंगापुर जाने का आदेश प्राप्त हुआ। अप्रैल, 1941 ई० को दुर्गामल की यूनिट सिकंदराबाद पहुंची जब उनकी बटालियन सिकंदराबाद पहुंची, तो उनकी 28 दिनों के लिए छुट्टी मंजूर की गई और मलाया जाने से पहले घर पहुंचने और अपने परिवार के सदस्यों से मिलने का अवसर दिया गया। सिकंदराबाद से उनकी बटालियन बंबई पहुंची और 23 अगस्त 1941 ई० को बंबई समुद्री बंदरगाह से मलाया के लिए रवाना हुई। वहां से 23 अगस्त, 1941 ई० को जलमार्ग के द्वारा मलाया के लिए रवाना हुई और 3 सितम्बर, 1941 ई० को मलाया पहुंची। सितंबर 1941 ई० तक सभी गोरखा बटालियन मलाया पहुंच चुकी थीं, 8 दिसम्बर 1941 ई० को जापान के द्वारा दक्षिण-पूर्व एशिया में तैनात मित्रराष्ट्रों पर युद्ध की घोषणा कर दी उसके बाद दिन-प्रतिदिन युद्ध की गति तेज होती चली गयी परन्तु जापनी सेना के युद्ध कौशल एवं सामरिक शक्ति के सामने ब्रिटिश फौज को घुटने टेकने पड़े, 15 फरवरी 1942 ई० को जापान ने सिंगापुर पर अधिकार कर लिया और मित्रराष्ट्रों की सेना को जापानियों के आगे आत्मसमर्पण करना पडा।[9]

आजाद हिन्द फौज में भूमिका

ब्रिटिश शासन के इतिहास में इससे पहले कभी भी भारतीय सैनिकों ने मलाया और बाद में दक्षिण-पूर्व एशिया के अन्य स्थानों पर इतना निराश महसूस नहीं किया था। दिसंबर 1941 ई० में, भारतीय सैनिकों के एक समूह ने खुद को जंगल में खो दिया। उनके एक अधिकारी, कैप्टन मोहन सिंह ने पीछे हटने वाली ब्रिटिश सेना में फिर से शामिल नहीं होने का फैसला किया। उन्होंने खुद को आश्वस्त किया कि भारतीय सैनिकों के पास अंग्रेजों के लिए लड़ने का कोई कारण नहीं था और इसके बजाय जापानियों के साथ लड़ने का भी कोई कारण नहीं था। इस मिशन को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने जापान के मेजर फुजिवारा से संपर्क किया, जिन्होंने उन्हें आश्वासन दिया कि जापान भारत को स्वतंत्रता प्राप्त करने में सहायता करने के लिए तैयार है। मेजर फुजिवारा ने यह भी घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार की ओर से एक ब्रिटिश अधिकारी कर्नल हंट द्वारा जापानी सरकार को सौंपे गए युद्ध के सभी भारतीय कैदी, 17 फरवरी 1942 ई० के दिन सिंगापुर के 'फरेर पार्क' में हुए ऐतिहासिक समारोह में ब्रिटिश सेना की और से ले॰ कर्नल हंट ने लगभग 70 हजार युधबंदी सेनिकों को केप्टन मोहनसिंह, जिन्हें बाद में जरनल का पद प्रदान किया गया एव कुछ अन्य अफसरों के समक्ष जापानी सेना के प्रतिनिधि मेजर फुजिवारा को सोंपा गया।

जब आजाद हिंद फौज का गठन किया गया तो दुर्गामल भी इसके वलियांटर बने, 1942 ई० में उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय सेना के गठन का प्रतिनिधित्व किया। भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में यह सेना मील का पत्थर साबित हुई। दुर्गामल उन लोगों में से एक थे जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीय सेना के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी प्रारंभ में, दुर्गामल को विभिन्न क्षेत्र से गोरखा जवानों को भारतीय राष्ट्रीय सेना के लिए स्वयंसेवक बटालियन लामबंद करने की जिम्मेदारी दी गई थी। जिसमें उन्हें सेना में देशभक्ति के जोश के साथ अपने साथी लोगों को भी शामिल होने के लिए प्रेरित किया। धीरे- धीरे वह अपनी योग्यता से सैनिक ऑफिसर ट्रेनिंग के लिए चुने गये। दुर्गामल ने अपनी देशभक्ति, वीरता और देश की स्वतंत्रता के लिए मर मिटने के जूनून के आधार पर पदोन्नति अर्जित की उन्हें मेजर का पद प्रदान किया गया।[10] मेजर दुर्गामल जासूस विभाग में एक टुकड़ी के कमांडर नियुक्त किए गये। वे भेष बदल कर शत्रु क्षेत्र में घुस जाते तथा वहां की जानकारी प्राप्त कर अपने फौजी कमांडरो तक पहुंचाते थे।

युद्धबंदी और अभियोग की अवधि

जून, 1944 ई० तक आज़ाद हिन्द फौज ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध घमासान यद्ध किया और साम्राज्यवादी शक्तियों के नाकों चने चबाए। ब्रिटिश सरकार को लगभग भारत छोड़ने पर मजबूर कर दिया था। हिमाचल के पहाड़ी वीरों ने आज़ादी की इस सशस्त्र लड़ाई में हल्के शस्त्रों, काम चलाऊ प्रशिक्षण और कठिन परिस्थितियों के होते हुए भी अदम्य साहस, अद्भुत शौर्य और युद्ध कौशल का परिचय दिया। भूखे-प्यासे रह कर जिस बहादुरी से ये आज़ादी के परवाने ब्रिटिश सेना के विरुद्ध लड़े उसकी मिसाल कहीं इतिहास में देखने को नहीं मिलती। इनकी देशभक्ति ने भारत के जनमानस को प्रेरित एवं प्रोत्साहित किया। 20 जून, 1944 ई० के लगभग जापानी सेना और आज़ाद हिन्द फौज को पीछे हटना पड़ा। इस आज़ादी की लड़ाई में आज़ाद हिन्द फौज के लगभग 26 हजार जवान शहीद हो गए। युद्ध के दौरान पकड़े गए जवानों को गिरफ्तार करके दिल्ली लाया गया। उनमें गुप्तचर विभाग के कमांडर मेजर दुर्गामल भी थे। रामनगर, धर्मशाला के निवासी मेजर दुर्गामल दुश्मन ब्रिटिश सेना के बीच जासूसी करते हुए 27 मार्च, 1944 ई० को इम्फाल मोर्चे पर पकड़े गए थे।[11]

मेजर दुर्गामल ने ब्रिटिश सरकार की हर प्रलोभन भरी पेशकश को ठुकरा दिया और मुआफीनामे पर हस्ताक्षर करने से भी इनकार कर दिया। जिसके पश्चात ब्रिटिश सेना ने अनेक प्रकार की कठोर मानसिक एवं शारीरिक यातना देना प्रारम्भ किया। कई प्रकार के प्रलोभन दिए गये ताकि कुछ जानकारी हांसिल की जा सके लेकिन दुर्गामल पर इन सब हथकंडो का कोई असर नही हुआ। आखिरकार ब्रिटिश सेना ने थक हार कर उन्हें दिल्ली लाने का निश्चय किया जहाँ युधबंदी के रूप

में उन्हें लालकिले के बंदीगृह में रखा गया। उनके विरुद्ध भारतीय सैनिक कानून की धारा तथा भारतीय दंड विधान की धारा 121 के अन्तर्गत सैनिक अदालत में मुकदमा चलाया गया ब्रिटिश सरकार किसी भी हालत में आजादी के इस संग्राम को दबाना चाहती थी और दुर्गामल से भी कहा गया की वह यह मान ले की उन्हें ब्रिटिश सरकार के खिलाफ भटकाया गया है और क्षमादान याचना की अपील करें। लेकिन देशभक्ति के आगे ब्रिटिश सरकार के इस प्रकार प्रलोभन देना व्यर्थ का प्रयास मात्र रह गया जब मेजर दुर्गामल जी ने ब्रिटिश प्रस्ताव को ठुकरा कर फांसी की सज़ा स्वीकार कर ली।[12]

मेजर दुर्गामल को फांसी के तख्ते पर चढ़ाने के सैनिक अदालत के फैसले को, तत्कालीन सैनिक प्रमुख द्वारा पुष्ट किए जाने के बाद परिवार के सदस्यों को मिलने की अनुमति दी गयी। परिवार को सरकरी पत्र के माध्यम से धर्मशाला से दिल्ली आने का बुलावा भेजा गया। ब्रिटिश अधिकारियों को विश्वास था की पत्नी शारदामल के प्रयास से दुर्गामल क्षमादान याचना के लिए मान जायंगे लेकिन् ब्रिटिश सरकार का यह प्रयास भी असफल रहा। मेजर दुर्गामल से उनकी पत्नी श्रीमती शरदामल तथा परिवार के अन्य सदस्यों का बंदीग्रह में दो बार मिलना हुआ। दोनों बार मेजर दुर्गामल प्रसन्न व स्वस्थ पाए गये अपने परिवार तथा रिश्तेदारों से मिलने पर उन्होंने विश्वासपूर्वक कहा था:-

अंग्रेजो के साथ हम स्वंत्रता की लडाई में चाहे,

जीत हो या हार हो, हिन्दोस्तान शीघ्र आजाद होगा

मेजर दुर्गामल, नेताजी की प्रशंसा के साथ-साथ जनरल मोहनसिंह व अन्य देशभक्ति में डूबे साथियों की तारीफ करते थे। अंततः आजाद हिन्द फौज के जिन भारतीय सेनानियों को ब्रिटिश सेना ने युद्धबंदी बनाया था उन्हें जर्मनी, जापान, इटली, फ्रांस, हॉलैंड, सिंगापुर, थाईलैंड, बर्मा, मलाया, चट्गावं, कलकत्ता, कराची, मुलतान, लाहौर, जालंधर, रोहतक, सियालकोट, जिगरकच्छ, दिल्ली और धर्मशाला आदि स्थानों की जेलों और युद्धबंदी कैम्पों में बंदी बनाकर रखा गया था। दिल्ली की लालकिला फौजी अदालत में इन पर मुकद्दमा चलाया गया।

लालकिले में आज़ाद हिन्द फौज के जिन सपूतों पर मुकद्दमा चलाया गया उनमें हिमाचल प्रदेश के भी बहुत से वीर सेनानी थे। इनमें ऊना के गंगा सिंह, वदमाणा चिंतपूर्णी के हवलदार बाबूराम, दौलतपुर के हरवंत सिंह, नगरोटा वगवां के कृष्णराज पलटा, सपडूल, पालमपुर के गजनसिंह, बैदी, कांगड़ा के छज्जूराम, 'उफ शासह ठाकुर, अनतराम, कोहला, बड़सर के अर्जन कांशीराम, करनेहड़ा, बड़सर के ख्याल सिंह, झनकर, हमीरपुर के गंगाराम, बाघला के गरीबदास, समैला के चंदूराम, गलोड़ के जयचंद, बागधार, हमीरपुर के जस्साराम, कोड़ी, हमीरपुर के जोधासिंह, तप्पा बमसन के ठाकुरदास, टिक्कर खतरियां के दीवान चंद, भागला भोरंज के दुर्गा, चौकी के ध्यान सिंह, चौवा, हमीरपुर के नन्दूराम, सनेड़ भोरंज के नत्थूराम, ककड़, हमीरपुर के नारायणदास, सोराड़, हमीरपुर के निक्कूराम, दरोबरी के फोणू राम, जनधराल, हमीरपुर के बालंदा, गरीरू, सुजानपुर टीहरा के बेलीराम, टिक्कर खतरियां के मुंशीराम, भगतराम तथा अनन्तराम, जांदल, हमीरपुर के मरचू, ककड़याणा, हमीरपुर के मुंशीराम, गलोड़ के मेघू तथा सुन्दर, समलेहड़ा भोरंज के शेर सिंह, करोहटा के संतराम, चम्बोह, सुन्दर और सुखराम, चमियोग के सुन्दर सिंह, घमरूण, हमीरपुर के सुरजन, रंगड़ के सुरजन, जसाई धनेटा के ज्ञानचंद, हमीरपुर के गणूराम, नत्थूराम आदि सेनानियों का लालकिले में कोर्ट मार्शल किया गया। अक्तूबर-नवम्बर, 1945 ई० में कांगड़ा, बिलासपुर, शिमला, हमीरपुर, कुल्लू और ऊना आदि कस्बों में आज़ाद हिन्द फौज के समर्थन में भारी प्रदर्शन हुए। शिमला में क्रांतिदल के सदस्यों ने आसपास की पहाड़ी रियासतों के शासकों और प्रशासकों को आतंकित किया। शिमला शहर में बिजली, पानी, टेलीफोन और रेल लाईन की तोड़-फोड़ से क्रांतिकारियों ने अंग्रेज़ अफसरों को आतंकित किया। शिमला में चंद्रबल बालजी, केवल कृष्ण, अजायबसिंह ठाकुर, जितेंद्रवीर, दीनानाथ आंधी आदि ने आज़ाद हिन्द फौज के समर्थन में इश्तिहार बनाए जो सारे शहर में लगाए तथा दूसरे स्थानों को भी भेज दिए गए। इन इश्तिहारों के माध्यम से विभिन्न जेलों में आज़ाद हिन्द फौज के युद्धबंदी जवानों को दी जाने वाली अमानुषी यातनाओं का पर्दाफाश किया गया।[13] आजाद हिन्द फौज के इन जवानों पर दिल्ली की लालकिला फौजी अदालत में अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह का मुकद्दमा चलाया गया।

मातृभूमि की रक्षा में सर्वोच्च बलिदान की परंपरा का निर्वहन करना

मेजर दुर्गामल को फांसी से पूर्व एक बार फिर माफीनामा स्वीकार करने को कहा गया, लेकिन उन्होंने पहले की तरह इस बार भी ब्रिटिश प्रशासन का प्रस्ताव ठुकरा दिया। 15 अगस्त 1944 ई॰ के दिन मेजर दुर्गामल को लालकिले के कारागार से दिल्ली के केन्द्रीय कारागार में लाया गया, जहाँ 10 दिन तक रखने के बाद 25 अगस्त 1944 ई०॰ के दिन फांसी की सजा दी गयी। फांसी पर चढ़ने से पहले उनके कुछ अंतिम शब्द थे "मेरा बलिदान व्यर्थ नही जायगा। भारत आजाद होगा" मेजर दुर्गामल ने 'जय हिंद' की पुकार के साथ हँसते-हँसते 31 वर्ष की आयु में माँ भारती की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दे डाली।[14] आज भी धर्मशाला क्षेत्र के इस सुपूत मेजर दुर्गामल को उनकी बहादुरी, वीरता, और देशभक्ति के लिए युवाओं का प्रेरणा स्रोत माना जाता है।

स्वतंत्रता पूर्व मेजर दुर्गामल का सम्मान

भारत सरकार ने मेजर दुर्गामल के वीरता और निस्वार्थ बलिदान भाव को सम्मानित करने के लिए संसद भवन में उनकी प्रतिमा स्थापित की है, उनकी पूण्यतिथि को देश भर में गोरखा समाज द्वारा 'बलिदान दिवस' के रूप में मनाया जाता है। उत्तराखंड के राज्यपाल लेफ्टिनेंट जनरल गुरमीत सिंह ने अमर मेजर दुर्गामल की स्मृति में डाक टिकट का विमोचन किया। इस दौरान उन्होंने पार्क में स्थित मेजर दुर्गामल की प्रतिमा पर माल्यार्पण कर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की साथ ही उतराखंड नगर पालिका परिषद की पहल से डोईवाला चौक पर मेजर दुर्गामल की घोड़े पर सवार मूर्ति स्थापित की गई है।[15] मेजर दूर्गामल की स्मृति में देशभर में फूटबल प्रतियोगिता का भी आयोजन होता रहा है, जो मेजर दुर्गामल के खेल के प्रति आकर्षण को दर्शाता है जिसमें देश के कई युवा उत्सुकता से भाग लेते हैं।

निष्कर्ष

इस पर्वतीय प्रदेश के कई हिस्सों पर पहले मुगलों, गोरखों, तथा इसके बाद 1947 ई० तक अंग्रेज़ी साम्राज्य की निरंतर घुसपैठ होती रही जिस करण यह प्रदेश ब्रिटिश प्रशासन के अधीन पंजाब का पहाड़ी एवं पिछड़ा क्षेत्र रहा। इस पहाड़ी राज्य पर अनेकानेक राजवंशो का अलग-अलग समय में प्रभुत्व होने के कारण इस क्षेत्र की भौगोलिक सीमायें परिवर्तित होती रही है लेकिन इन परिवर्तनों का यहाँ के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, तथा सांस्कृतिक जीवन पर विशेष प्रभाव नही पडा और लोग एक दुसरे से जुड़े रहे तथा रजनीतिक विचारों के आदान-प्रदान होने से यहाँ स्वाधीनता की चेतना जन-जन में ब्याप्त होने लगी। और प्रदेश

वासियों ने कंधे-से-कन्धा मिलाकर भारतीय राष्ट्रीय आंदोलनों में भाग लेना शुरू किया जिसमे कई सेनानियों ने अपने जीवन के बहुमुल्य क्षण जेल में कठोर यातना सहन करते हुए बिताये स्वाधीनता संग्राम के इस लम्बे संघर्ष में इस पर्वतीय प्रदेश के महान देशभक्तों, स्वतंत्रता सेनानियों और शहीदों का योगदान आज की युवा पीढ़ी को प्रेरणा और मार्गदर्शन देता रहेगा। भारत देश की एकता, अखंडता और रक्षा के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाले शहीदों के प्रति आभार और सम्मान प्रकट करने के लिए आजादी का अमृत महोत्सव एक उत्कृष्ट प्रयास है। मेजर दुर्गामल ने अल्प आयु में देश की रक्षा के लिए अपने सुख, सुविधाओं को त्याग कर अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने का दृढ़ साहस दिखाया, जिसके लिए उन्हें हमेशा याद किया जाएगा। राष्ट्र प्रथम की भावना से प्रेरित उनका जीवन शौर्य, वीरता, साहस का प्रतीक है। हमारे स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों व अमर शहीदों के सर्वोच्च बलिदान के कारण हम आज खुली हवा में सांस ले रहे हैं । हमें उन महान सेनानियों को सदैव याद करना चाहिए, जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों में भी राष्ट्र प्रथम की भावना से अपने जीवन को जिया।

सन्दर्भ ग्रन्थ

---

[1] हिमाचल प्रदेश सरकार: हिमाचल प्रदेश के स्वतन्त्रता सेनानी, खण्ड-प्रथम, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 1985 पृष्ठ 12

[2] हिमाचल प्रदेश सरकार: स्वाधीनता की ओर, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 1993 पृष्ठ 141 देखिये, हिमाचल प्रदेश सरकार: स्वाधीनता का संकल्प, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 2005 पृष्ठ 32-33.

[3] हिमाचल प्रदेश सरकार: हिमाचल प्रदेश के स्वतन्त्रता सेनानी, खण्ड-प्रथम, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 1985 पृष्ठ 9

[4] हिमाचल प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 2013 पृष्ठ 192.

[5] P.N. Chopra: *Who's* who *of Indian Martyars (Vol- I),* Ministry of Education and Youth Serves, New Delhi, 1969 p. 100

[6] हिमाचल प्रदेश सरकार: स्वाधीनता की ओर, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 1993 पृष्ठ 69.

[7] हिमाचल प्रदेश सरकार: हिमाचल प्रदेश के स्वतन्त्रता सेनानी, खण्ड-प्रथम, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 1985 पृष्ठ 94

[8] एम. पी. राई: वीर जाति की अमर कहानी, नेपाली से हिंदी अनुवाद प्रकाश प्रसाद उपध्याय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2000, पृष्ठ 126

[9] हिमाचल प्रदेश सरकार: स्वाधीनता का संकल्प, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 2005 पृष्ठ 45

[10] हिमाचल प्रदेश सरकार: स्वाधीनता की ओर, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 1993 पृष्ठ 70

[11] हिमाचल प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम का संक्षिप्त इतिहास, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 1993 पृष्ठ 163

[12] एम. पी. राई: वीर जाति की अमर कहानी, नेपाली से हिंदी अनुवाद प्रकाश प्रसाद उपध्याय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2000, पृष्ठ 129

[13] हिमाचल प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, 2013 पृष्ठ 211

[14] P.N. Chopra: Who's who of Indian Martyars (Vol- I), Ministry of Education and Youth Serves, New Delhi, 1969 p. 120

[15] https://www.etvbharat.com/hindi/uttarakhand/state/dehradun/100-feet-high-tricolor-and-and-martyr-major-durga-malla-statue-unveiled-at-doiwala-chowk/uttarakhand20230309165923104104215

International Research Journal
IJNRD
Research Through Innovation